© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 04 , Issue : 12 | October – December 2017

औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था, व्यपगत का सिद्धात : एक विवेचना

श्रीमती अनुबाला

परिचय

औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था से तात्पर्य है कि किसी दूसरे देश की अर्थव्यवस्था का उपयोग अपने हित के लिए प्रयोग करना। भारत में औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था की शुरुआत 1757 ई0 में प्लासी युद्ध से हुई, जो विभिन्न चरणों में अपने बदलते स्वरूप के साथ स्वतंत्रता प्राप्ति तक चलती रही।

भारत में ब्रिटिश औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था के बारे में सर्वप्रथम दादा भाई नौरोजी ने अपनी पुस्तक 'द पावर्टी एण्ड अन ब्रिटिश रूल इन इण्डिया' में उल्लेख किया। इनके अलावा रजनी पाम दत्त, कार्ल माक्र्स, रमेश चन्द्र दत्त, वी.के.आर.वी राव आदि ने भी ब्रिटिश औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था के बारे में अपने विचार प्रगट किये हैं।

वाणिज्यिक चरण

रजनी पाम दत्त ने अपनी पुस्तक 'इण्डिया टुडे' में ब्रिटिश औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था को तीन चरणों में विभाजित किया है-

1. वाणिज्यिक चरण -1757-1813
2. औद्योगिक मुक्त व्यापार- 1813-1858
3. वित्तीय पूंजीवाद -1858 के बाद

ध्यातव्य है कि उपरोक्त चरणों में ऐसा नहीं है कि एक चरण समाप्त होने के बाद दूसरा चरण चला अपितु शोषण के पुराने रूप समाप्त नहीं हुए बल्कि नए रूपों में अगले चरण में चलते रहे।

वाणिज्यिक चरण की शुरूआत 1757 के प्लासी युद्ध के विजय के साथ प्रारम्भ होता है। इस चरण में कम्पनी का मुख्य लक्ष्य अधिकाधिक व्यापार में लाभ प्राप्त करना था। यद्यपि इसके पहले भी ब्रिटिश व्यापार को महत्व देते थे, किन्तु तब इनका व्यापार भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए लाभकारी था। किन्तु प्लासी की विजय ने इस व्यवस्था को उलट दिया, इस विजय के बाद बंगाल का राजस्व इनके अधिकार में आ गया। बक्सर विजय के बाद बंगाल, बिहार, उड़ीसा की दिवानी मिल गयी, जिससे इनके पास ढेर सारा भारतीय पैसा राजस्व के रूप में कम्पनी को मिलने लगा। अब ये इसी पैसे से भारतीय माल खरीदते और ब्रिटेन भेज देते। इस व्यापारिक प्रक्रिया से भारत को अपनी वस्तु के बदले विदेशी मुद्रा न प्राप्त होकर भारतीय मुद्रा की प्राप्त होती, जो कि सामान्य व्यापारिक सिद्धान्त के प्रतिकूल था। इस तरह भारतीय पूँजी भारत से निकलने लगी, यही से धन निष्कासन की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है।

औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था का दूसरा चरण 1813 में व्यापारिक एकाधिकार समाप्त होने के साथ शुरू होता है। इस चरण का मुख्य प्रभाव विऔद्योगीकरण के रूप में दिखता है।

यही वह काल था जब ब्रिटेन में औद्योगिक क्रान्ति हो रही थी। अतः भारतीय अर्थव्यवस्था का दोहन औद्योगिक क्रान्ति को सफल बनाने के लिए होने लगा। औद्योगिक क्रान्ति की सफलता निम्न तीन बिन्दुओं पर निर्भर थी।

- विनिर्मित उत्पादों के लिए विशाल बाजार।
- कच्चे माल की सतत आपूर्ति।
- खाद्यान्न की आपूर्ति।

उपरोक्त आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भारतीय अर्थव्यवस्था एवं प्रशासनिक संरचना में अमूल-चूल परिवर्तन किए गये।

बाजार प्राप्ति के लिए भारतीय राज्यों पर प्रत्यक्ष नियंत्रण स्थापित किया जाने लगा। जिसे बैंटिग एवं डलहौजी के कार्य-काल में देखा जा सकता है।

कच्चे माल की बंदरगाहों तक पहुँच एवं तैयार माल को सुदूर गाँवों एवं छोटे बाजारों तक पहुँच सुनिश्चित करने के लिए रेल परिवहन, सड़क परिवहन का विकास किया।

दूसरी तरफ भारतीय उद्योगों से प्रतिस्पर्धा को कम करने के लिए विऔद्योगीकरण पर बल दिया गया। इससे इनके सभी उद्देश्यों की पूर्ति दिखाई पड़ती है।

भारतीय पारम्परिक उद्योगों के पतन के कारण ब्रिटेन को विशाल बाजार के साथ-साथ कच्चे माल की सतत् आपूर्ति होती रही।

विऔद्योगीकरण के कारण श्रम-बल कृषि कार्यों में लग गया। जिससे ब्रिटेन को कच्चे माल के साथ-साथ खाद्यान्न आपूर्ति भी होती रही।

इस चरण तक भारतीय अर्थव्यवस्था पूरी तरह से टूट गयीं। देश की पारंपरिक हस्तकलाओं को उखाड़ फेंका। कुटीर उद्योगों के पतन एवं अधिकाधिक खाद्यान्न निर्यात के साथ-साथ वाणिज्यक उत्पादन से भारत में गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी का संकट बढ़ता गया। इस दुर्दशा का वर्णन स्वयं बैंटिंग तथा माक्र्स ने किया है-

इस आर्थिक दुर्दशा का व्यापार के इतिहास में कोई जोड़ नहीं, भारतीय बुनकरो की हड्डियां भारत के मैदान में विखरी पड़ी हैं।

उपनिवेशवाद का तीसरा चरण 1858 के बाद प्रारम्भ होता है, जिसे वित्तीय पूँजीवादी चरण के नाम से जाना जाता है।

इस चरण तक आते-आते अन्य यूरोपीय देशों में भी औद्योगिक क्रान्ति प्रारम्भ हो चुकी थी। जिससे बाजार एवं कच्चे माल की प्रतिस्पर्धा बढ़ गयी।

ब्रिटेन के पूँजीवादी वर्ग ने औद्योगिक क्रान्ति जिसका निवेश वे अधिक लाभ हेतु अन्यत्र करना चाहते थे। जिसके लिए भारत एक लाभकारी एवं सुरक्षित था। क्योंकि-

- 1857 की क्रान्ति के बाद, प्रशानिक व्यवस्था में व्यापार परिवर्तन किया गया था।
- चूँकि भारत ब्रिटिश प्रशासन के अधीन था, अतः यहाँ ब्रिटिश हितों के अनुकूल नीतियाँ बनायी जा सकती थीं।
- भारत में कच्चा माल तथा सस्ता श्रम आसानी से उपलब्ध था।
- ब्रिटिश प्रशासन द्वारा पूँजीपति को सस्ता ऋण भी उपलब्ध कराया गया।

उपरोक्त परिस्थितियों ने ब्रिटिश पूँजीपतियों को अनेक क्षेत्रों में निवेश के लिए प्रेरित किया। अब ब्रिटिश पूँजी के अन्तर्गत अनेक उद्योग धन्धों, चाय, काफी नील तथा जूट के बगानों, बैंकिंग, बीमा आदि क्षेत्र आ गये।

उपरोक्त चरणों के अध्ययन से पता चलता है कि औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था ने भारतीय अर्थव्यवस्था को पूरी तरह नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। कृषि, उद्योग, हस्तशिल्प कुटीर उद्योग पर इसके दूरगामी प्रभाव पड़े, जिसे हम निम्नलिखित बिन्दुओं के तहत समझ सकते है-

- व्यापार एवं कुटीर उद्योग पूर्णतया समाप्त हो गये जिससे कृषि पर दबाव बढ़ गया।
- वाणिज्यक फसलें उगाने के कारण देशमें दुर्भिक्ष, अकाल आदि आम बात हो गये, जिससे देश में प्रतिवर्ष बड़ी संख्या में धन-जन की हानि हुई।
- ब्रिटिश उद्योगों को प्रोत्साहन तथा भारतीय उद्योग को हतोत्साहित कियागया, जिससे भारत के हस्त-शिल्प एवं परम्परागत कपड़ा उद्योग पूर्णतयः नष्ट हो गये।
- अंगे्रजों ने भारतीय जुलाहों को इतना कम मूल्य देना आरम्भ कर दिया कि उन्होंने बढ़िया कपड़ा बनाना ही बन्द कर दिया।
- भारतीय माल पर अंग्रेजों द्वारा इतना कर लगा दिया जाता जिससे उसकी कीमत बाजारमें दोगुनी हो गई, जिससे बाजार प्रतिस्पर्धा में वे मशीनी उत्पादन का मुकाबला न कर सके।

औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था के कुछ सकारात्मक प्रभाव भी पड़े, किन्तु नकारात्मक प्रभाव के सामने ये बहुत कम हैं। जो सकारात्मक प्रभाव पड़े भी उनके पीछे अंगे्रजों की कोई सद्भावना नहीं थी। सकारात्मक परिणामों का विवरण निम्नलिखित:-

- अंग्रेजों द्वारा उद्योग लगाने के कम में आधारभूत संरचना का विकास किया गया, जिसका लाभ भारत को भी मिला। सीमित मात्रा में लोगों को रोजगार मिला लेकिन मजदूरों को शोषण का शिकार होना पड़ा।
- औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था के परिणाम स्वरूप सबसे बड़ा लाभ भारत में राष्ट्रवाद का उदय के रूप में मिला।
- अंग्रेजों के न चाहते हुए भी अपनी शोषणवादी प्रक्रिया में वे अपने इस अनैच्छिक संतान को जन्म दे गये। जो अन्ततः उनके विनाश में महत्वपूर्ण भूमिका निभाया।

उपरोक्त तीनों चरणों में ब्रिटिश औपनिवेशिक अर्थवस्था ने भारतीय अर्थव्यवस्था को तहस-नहस कर दिया। भारतीय कृषि व्यापार, उद्योग, हस्त-शिल्प पूरी तरह नष्ट हो गये। विश्व की सबसे मजबूत अर्थव्यवस्था वाला देश अब सबसे गरीब देश की श्रेणी में आ गया। 'सोने की चिड़िया कहलाने वाला भारत अब भुखमरी, अकाल, दरिद्रता वाला देश कहलाने लगा।

व्यपगत का सिद्धात:

डलहौजी का ब्यपगत सिद्धांत कम्पनी के साम्राज्यवादी नीति के चरमोत्कर्ष को दर्शाती है। इस नीति का कोई नैतिक आधार नहीं था, वरन यह पूरी तरह ब्रिटिश औपनिवेशिक हित से परिचालित था। इसका उद्देश्य मुगल

शर्वशक्ति के मुखौटे को समाप्त करके एक विस्तृत भारतीय सामान्य का निर्माण कसा जिससे ब्रिटिश आर्थिक हित संचालित हो सके।

व्यपगत सिद्धांत के क्रियान्वयन के क्रम में डलहौजी ने भारतीय राज्यों को तीन श्रेणियों में विभाजित किया।

- वे रियासतें जो कभी भी उच्चतर शक्ति के अधीन नहीं थी और न ही कर देती थीं।
- वे रियासतें जो मुगल सम्राट अथवा पेशवा के अधीन थीं और उन्हें कर देती थी, परन्तु अब वे अंग्रेजों के अधीनस्त थी।
- वे रियासतें जो अंग्रेजों ने सनदों द्वारा स्थापित की थीं अथवा पुनर्जीवित की थी। डलहौजी का मानना था कि-"प्रथम श्रेणी के रियासतों को गोद लेने के मामले में हस्तक्षेप का अधिकार नहीं हैं।
- दूसरी श्रेणी के रियासतों को गोद लेने के लिए हमारी अनुमति आवश्यक है। हम मनाही कर सकते है, परन्तु हम प्रायः अनुमति दे देंगे।
- तीसरी श्रेणी की रियासतों में मेरा विश्वास है कि उत्तराधिकार में गोद लेने की आज्ञा दी ही नहीं जानी चाहिए। डलहौजी ने यह सिद्धान्त नया नहीं बनाया था। 1834 में कोर्ट आफ डायरेक्टर्स ने कहा था कि-"गोद लेने का अधिकार हमारी ओर से एक अनुग्रह है, जो एक अपवाद के रूप में देनी चाहिए।"

इसी आधार पर 1839 में माण्डवी राज्य 1840 में कोलाबा और जालौर राज्य और 1842 में सूरत की नबाबी समाप्त कर दी गयी। डलहौजी ने ब्यापगत सिद्धांत के क्रियान्वयन के क्रम में-

- सतारा- 1848
- जैतपुर- 1849
- सम्भलपुर- 1849
- बघाट- 1850
- ऊदेपुर- 1852
- झाँसी- 1853
- नागपुर- 1854

का बिलय कर लिया। डलहौजी ने अपनी इस नीति का औचित्य सिद्ध करते हुए इस बात पर बल दिया कि "इन कृत्रिम मध्यस्थ राज्यों को समाप्त कर जनता से प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित किया जाना चाहिए।" इसके परिणामस्वरूप उन राज्यों में पुरानी प्रशासनिक पद्धति समाप्त हो जायेगी तथा ब्रिटिश के अधीन एक अधिक विकसित पद्धति लागू होगी।

किन्तु गहराई से अवलोकन करने पर ज्ञात होता है कि डलहौजी का यह कदम ब्रिटिश औपनिवेशिक हित में उठाया गया। अगर भारत में एक विस्तृत बाजार का निर्माण किया जाना था तो न केवल अधिक से अधिक भारतीय राज्यों को प्रत्यक्ष नियंत्रण में लेने की जरूरत थी वरन एक उन्नत यातायात एक संचार व्यवस्था का विकास भी आवश्यक था। उदाहरणके लिए बम्बई तथा मद्रास के बीच संचार व्यवस्था विकास करने के लिए सतारा तथा बंबई एवं कलकत्ता के बीच संचार व्यवस्था के विकास के लिए नागपुर को प्रत्यक्ष नियंत्रण में लेना अनिवार्य था।

वस्तुतः कोर्ट आफ डायरेक्टर्स के द्वारा प्रतिपादित एवं डलहौजी के द्वारा विकसित एवं कार्यान्वित व्यपगत का सिद्धांत अनैतिक एवं औचित्यहीन था। विश्लेषण करने पर इस पद्धति की कई खामियां स्पष्ट हो जाती हैं। कम्पनी के द्वारा व्यपगत सिद्धान्त की उद्घोषणा भारतीय रीति-रिवाज एवं सामाजिक, पंरपरा की अवहेलना थी, क्योंकि भारत में सदा से ही गोद लेने का अधिकार स्वीकृत रहा था और इसे एक धार्मिक कृत्व में भी शामिल किया गया था।

ब्रिटिश से पूर्व मुगल एवं मराठे राज्य के द्वारा अधीनस्थ शासकों को नजराने के बदले गोद लेने का अधिकार प्राप्त था। दूसरे कम्पनी द्वारा किये गये भारतीय राज्यों का श्रेणीकरण अथवा वर्गीकरण अस्पष्ट था, क्योंकि अधिनस्थ एवं आश्रित दोनों राज्यों के बीच स्पष्ट विभाजन रेखा खींचा जाना बहुत ही कठिन था। तथा उस समय ऐसी कोई नायिक संस्था भी नही था जो इस बात का निपटारा हो सके।

इसके अतिरिक्त इस सिद्धांत के पीछे कोई नैतिक अथवा कानूनी अवधारणा काम नहीं कर रही थी, वरन यह एक अवसरवादी नीति पर आधारित थी। उदाहरण के लिए अवध राज्य को ब्रिटिश साम्राज्य में मिलाया जाना ब्रिटिश औपनिवेशिक हितों के लिए एक आवश्यक कदम था। चूँकि अवध पर व्यपगत का सिद्धांत लागू नहीं हो सकता था, इसलिए अवध को कुशासन के आधार पर ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिया गया। अतः एक दृष्टि से यह शाक्ति का व्यपगत न होकर नैतिकता का व्यपगत था।

सन्दर्भ ग्रथ सची:

1. Habib, Irfan Essays in Indian History: Towards a Marxist Perception
2. Joshi, P.C. Rebellion – 1857
3. Kumar, Dharma (ed.) Cambridge Economic History of India, Vol. – II
4. Mishra, Girish Economic History of Modern India
5. Mishra, Girish Adhunik Bharat Ka Arthik Itihas(Hindi tr.)
6. Panigrahi, D.N. (ed.) Economy, Society and Politics in Modern India
7. Rai, Satya Murti (ed.) Bharat Mein Upniveshwad Aur Rashtrawad (Hindi)
8. Ravindra Kumar Social History of Modern India
9. Raychandhary, Tapan Indian Economy in the 19th Century : A Symposium
10. Sarkar, Sumit Modern India, 1885-1947 Sarkar, Sumit Audhunik Bharat 1885-1947 (Hindi) Shukla, Ram Lakhan (ed.) Adhunik Bharat Ka Itihas (Hindi)
11. Siddiqui, Aisya (ed.) Trade and Finance in Colonial India